मार्गदर्शन और प्रज्ञान

आनन्दमय जन्मदिवस के उपलक्ष्य में प्रस्तुत

श्रीगुरुमाई के साथ घटित कुछ प्रसंग

श्रीगुरुमाई के साथ प्रसंग : १

लीलावती स्टुअर्ट सट्क्लिफ़

कुछ वर्षों पूर्व जब मैं अपने परिवार के साथ गुरुदेव सिद्धपीठ गई थी तब मुझे श्रीगुरुमाई से एक सुन्दर-सा कार्ड मिला। यह वह समय था जब अपने जीवन में मैं परिवर्तन से गुज़र रही थी और चुनौतियों का सामना कर रही थी, और गुरुमाई जी मेरे इन संघर्षों के बारे में जानती थीं। कार्ड में अन्दर गुरुमाई जी ने लिखा था, "जब संसार अन्धकारमय लगे तो महान आत्माओं के शब्द निश्चित रूप से व्यक्ति के मन के अँधेरे कोनों को उजाले से भर देते हैं।" गुरुमाई जी के सन्देश ने मेरे अन्तर की गहराई में किसी तार को छू लिया—और अपने विचारों व मनोभावों के प्रति मेरा दृष्टिकोण ही बदल दिया। मैंने पाया कि किन्हीं विशिष्ट परिस्थितियों को लेकर जब मेरे अन्दर हताशापूर्ण, अन्धकारमय विचार और भावनाएँ उठें तो मैं गुरुमाई जी की पुस्तकों या सिद्धयोग पथ के अन्य आधारभूत ग्रन्थों को पढ़ सकती हूँ, इस विशिष्ट उद्देश्य के साथ कि मेरे दृष्टिकोण के "अँधेरे कोने उजाले से भर जाएँ।"

जब भी मैं ऐसा करती हूँ, तो हर बार मैं अनुभव करती ही हूँ कि मैंने अपने मन में बोध का एक दीप प्रज्वलित कर दिया है! मैं जिन भी परिस्थितियों से जूझ रही होती हूँ, उनके बारे में विचार करने और उन्हें समझने के लिए अधिक समझदारी भरे तरीक़ों की खोज कर पाती हूँ। जब मैं किसी परिस्थिति विशेष के बारे में प्रज्ञान प्राप्त करने हेतु पठन करती हूँ तो मुझे वस्तुतः यह अनुभव होता है कि मैं सत्य के प्रकाश में अपने मन को स्नान करा रही हूँ। पठन और मनन के बाद जब पुस्तक या कम्प्यूटर स्क्रीन से मैं अपनी आँखें हटाती हूँ तो सब कुछ हल्का-हल्का-सा और स्पष्ट प्रतीत होता है। अवसाद, अन्धकार लुप्त हो चुका होता है। कितनी राहत मिलती है तब!

हाल ही में मैं अपने पिता के साथ समय व्यतीत करने गई थी; उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था और उन्हें बहुत उदास लग रहा था। जब उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया था तब हम उन्हें नर्सिंग होम ले गए थे जहाँ उनकी देखभाल व उपचार, दोनों ही अच्छी तरह से हो पाएँ। बीमार होने से पहले वे

बिलकुल चुस्त-तन्दुरुस्त व आत्मनिर्भर थे, पर अब वे शारीरिक रूप से बहुत कमज़ोर हो गए थे और यह देख पा रहे थे कि उनके शरीर के अवयवों की शक्तियाँ क्षीण होती जा रही हैं। उन्होंने अपना यह दुःख मुझे बताया, तब मैंने उनसे पूछा कि क्या वे एक कविता सुनना पसन्द करेंगे? उन्होंने हामी भरी। मैंने उसी समय अपने मोबाईल फ़ोन पर सिद्धयोग पथ की वेबसाइट खोली और उस पर प्रकाशित गुरुमाई जी की कविता, 'साक्षी भाव' खोल ली। मैंने अभी कविता के कुछ ही शब्द पढ़े थे कि मैंने देखा कि पिता जी का चेहरा शान्त व कोमल हो गया है जो पहले तनावग्रस्त दिख रहा था। उनके चेहरे पर अब एक मुस्कान छा गई। कविता का पठन समाप्त होते-होते, पिता जी के चेहरे पर शान्तभाव झलकने लगा, और अब उनके मन की व्याकुलता चली गई थी। मैंने उनसे पूछा कि क्या वे कविता को दोबारा सुनना पसन्द करेंगे? उन्होंने जवाब दिया, "हाँ, ज़रूर।" जब मैं कविता को दोबारा पढ़ रही थी तो पिता जी के चेहरे पर फिर से खुशीभरी मुस्कान छाने लगी; मैंने देखा कि वे अपने अन्तर में किसी ऐसे स्थान में प्रवेश कर रहे हैं जो अधिक शान्तिपूर्ण था। इस बात ने मेरे दिल को छू लिया कि पिता जी को कितनी राहत व सुकून मिल रहा है। मैंने यह भी देखा कि गुरुमाई जी के शब्दों को पढ़ने पर पिता जी की परिस्थिति के प्रति मेरा अपना दृष्टिकोण भी बदल गया था। जब मैं पहली बार उनसे मिलने गई थी तो मेरा मन मायूसी से भर गया था और उनकी दशा देखकर मैं बहुत उदास हो गई थी। परन्तु, जब मैं कविता पढ़ रही थी और पिता जी सुन रहे थे, मेरी मनःस्थिति बदल गई, और मैं अनुभव करने लगी कि पिता जी के जीवन में जो हो रहा है, उसे मैं शान्त व सहज भाव से स्वीकार कर पा रही हूँ। अब मेरा केन्द्रण इस बात पर ज़्यादा था कि हम दोनों के अन्तर में क्या घटित हो रहा है : मुझे यह महसूस होने लगा कि हम अपने हृदय से जुड़ते जा रहे हैं। हर रोज़ जब मैं पिता जी से मिलने जाती, मैं उनसे पूछती कि क्या वे गुरुमाई जी की कविता से कुछ शब्द सुनना चाहेंगे? यह सुनकर हर बार पिता जी का चेहरा खिल उठता, कविता सुनते-सुनते वे मुस्कराते, और बीच-बीच में कुछ शब्द या वाक्यांश सुनकर 'हूँ' करते मानो उन शब्दों में निहित कोई विशिष्ट अर्थ समझ गए हों। मैं देख पा रही थी कि पिता जी जैसे-जैसे कविता में से गुरुमाई जी की सिखावनियों व निर्देशों का पालन करते जा रहे हैं, उनके जीवन में प्रकाश प्रवाहित होने लगा है। अपनी कविता के माध्यम से गुरुमाई जी मेरे पिता जी को जो निमन्त्रण दे रही थीं, मैंने देखा कि पिता जी उसे अंगीकार कर रहे हैं — ". . .मुक्त हो जाओ। अपने शरीर को तनावमुक्त हो जाने दो।" मैं देख पा रही थी कि बाह्य तौर पर इतनी दुस्तर दीखने वाली परिस्थितियों में भी, अपने जीवन के इस अन्तिम पड़ाव पर पिता जी सीख रहे थे कि अपने ही अन्तर में शान्ति की अनुभूति किस प्रकार की जाए। मैं जब गुरुमाई जी के शब्दों को पढ़ती तो पिता जी और मैं, हम दोनों उसकी कल्पना करते जिसका वर्णन वे कर रही थीं। बहुत देर तक हम दोनों मौन रहते, एक-साथ अन्तर के उस

सुन्दर स्थान का अनुभव कर रहे होते जो प्रशान्ति और प्रकाश से भरा है—ऐसा स्थान जहाँ कोई पीड़ा नहीं है।

पिता जी से मेरी इन भेंटों के कुछ सप्ताह पश्चात् उनका निधन हो गया। मुझे तब भी मालूम था, और अब भी मैं जानती हूँ कि गुरुमाई जी के शब्दों को सुनने व उन पर मनन करने से पिता जी को गुरुमाई जी की कृपा व उनके आशीर्वाद प्राप्त हुए। अपने जीवन के अन्तिम समय में, पिता जी अपने हृदय की निश्चिन्तता में विश्रान्ति पा सके और अपने अन्तर में शान्ति की अनुभूति कर पाए।

इस संसार में श्रीगुरुमाई की उपस्थिति के लिए, मैं अपने हृदय में असीम कृतज्ञता का अनुभव करती हूँ। भगवान करे कि हर किसी का ऐसा सद्भाग्य हो कि वह गुरुमाई जी के चैतन्य शब्दों को पढ़ सके व उनका श्रवण कर सके—वे शब्द जो निःसन्देह उनकी कृपा व आशीर्वाद प्रदान करते हैं।

***

श्रीगुरुमाई के साथ प्रसंग : २

गरिमा बोरवणकर

भारत में स्थित लखनऊ शहर में मेरा बचपन बीता। तब मैं बहुत शान्त और शर्मीली थी जैसे-जैसे मैं बड़ी हुई, मेरा स्वभाव और भी संकोची व शर्मीला होता गया। मुझे याद है कि मुझे किसी भी परिस्थिति में यह डर लगा रहता था कि कहीं किसी का ध्यान मेरी ओर न आ जाए। मुझे पता नहीं था कि मैं अपने इस संकोची और शर्मीले स्वभाव की जकड़ से किस तरह छुटकारा पाऊँ?

१९८४ में अपनी युवावस्था में, मैं अपनी बहन वाणी अग्रवाल के साथ गुरुदेव सिद्धपीठ में लम्बी अवधि के लिए विज़िटिंग सेवाकर्ता थी। गुरुदेव सिद्धपीठ में अन्य सेवाकर्ताओं के साथ बात करते समय या उनसे मिलते समय मैं एकदम सहज महसूस किया करती थी; हर कोई बहुत उदारतापूर्वक व्यवहार किया करता था।

एक शाम मुझे एक सत्संग के सूत्रधार की सेवा अर्पित करने के लिए आमन्त्रित किया गया जो अगले ही दिन सुबह होने वाला था। बिना सोच-विचार किए, मैंने और भी सेवा अर्पित करने के इस सुअवसर को तुरन्त ही स्वीकार कर लिया!

फिर मुझे एहसास हुआ कि मैंने यह क्या कर दिया। नहीं! नहीं! सबके सामने बोलना! मेरे पेट में एक जानी-पहचानी-सी मरोड़ उठने लगी। जब मैंने कल्पना की कि मैं अनगिनत लोगों के सामने खड़ी

होकर बोल रही हूँ तो मेरी घबराहट और भी बढ़ गई। परन्तु इस भावना में बहने के लिए मेरे पास समय नहीं था। मुझे अपने कोच के साथ अगली सुबह की तैयारी पर ध्यान देना था। मैंने इस समझ को बनाए रखा कि सेवा अर्पित करने का कोई भी अवसर बड़े सद्भाग्य की बात है और गुरुमाई जी की कृपा के कई ठोस और रूपान्तरणकारी अनुभव याद किए जो मुझे सेवा के अभ्यास द्वारा हुए थे। मुझे गुरुमाई जी की कृपा व आशीर्वादों पर गहरी श्रद्धा थी। इसलिए तैयारी करते समय, मैंने गुरुमाई जी से बहुत प्रार्थना की।

अगली सुबह मैं गुरुचौक से होकर प्रोग्रामिंग ऑफ़िस की ओर जा रही थी। प्रोग्रामिंग ऑफ़िस को अब लाइव-इवेन्टस विभाग कहा जाता है। मैं 'ॐ नमः शिवाय' मन्त्र का जप करते हुए जा रही थी। वहाँ मैंने गुरुमाई जी को बाबा मुक्तानन्द के समाधि-मन्दिर के बाहर खड़े देखा। मैं उन्हें देखकर बहुत ख़ुश हो गई! मैंने उन्हें प्रणाम किया और उनका अभिवादन किया।

गुरुमाई जी ने मुझसे पूछा कि मैं कहाँ जा रही हूँ। मैंने कहा कि मैं प्रोग्रामिंग ऑफ़िस की ओर जा रही हूँ। फिर मैंने गुरुमाई जी को बताया कि उस दिन सत्संग में सूत्रधार की सेवा अर्पित करने को लेकर मुझे बहुत घबराहट हो रही है और उनसे आशीर्वाद माँगा। गुरुमाई जी के चेहरे पर प्रेम और स्नेह भरी बड़ी-सी मुस्कान आ गई। उन्होंने मुझसे पूछा कि मुझे कैसा लग रहा है। मैंने बताया कि मैं पेट में बहुत हलचल महसूस कर रही हूँ, इतनी अधिक जैसे कि पेट में मरोड़ उठ रही हो।

उसी दमकती हुई मुस्कान के साथ गुरुमाई जी ने अपना हाथ आगे बढ़ाया और मेरा पेट सहलाने लगीं। हाथ फेरते-फेरते वे बोलीं, "ये घबराहट नहीं है। यह तो शक्ति है जो तुम्हारे अन्दर अपनी उपस्थिति महसूस करा रही है। यह तुम्हारी सहायता करने के लिए है। विश्वास रखो। सब कुछ ठीक होगा।" मेरे चेहरे पर मुस्कान आ गई। मेरे अन्दर की हलचल कम होने लगी और मैं अपने अन्तर में आनन्द को उमड़ता हुआ महसूस करने लगी। गुरुमाई जी ने अपना हाथ मेरे कन्धे पर रखा और कहा, "अब जाओ, कहीं तुम्हें देर न हो जाए।" मैंने हाथ जोड़कर प्रणाम किया और तेज़ी-से प्रोग्रामिंग ऑफ़िस की ओर चल पड़ी। उन अनमोल क्षणों में हर चीज़ बदल गई थी। मेरा हृदय प्रेम से भर गया और हर क़दम के साथ मुझे ख़ुद पर और अधिक विश्वास होने लगा।

सत्संग के सूत्रधार की सेवा का अनुभव बहुत ही आनन्दपूर्ण था। मेरे अन्तर का प्रेम बाहर की ओर प्रवाहित हो रहा था। मैं स्वयं को पहचान ही नहीं पा रही थी। मैं आश्चर्य में थी।

उस दिन के बाद से मैंने कई सत्संगों व कार्यक्रमों में सूत्रधार की सेवा और भाषान्तर किया है। और जब भी मैं किसी ऐसी स्थिति में होती हूँ जिसमें मेरे पेट में मरोड़ उठने लगती है तो मैं गुरुमाई जी

के उन शब्दों का स्मरण करती हूँ। मैं शक्ति की उपस्थिति को पहचान पाती हूँ। उस शक्ति का अनुभव मैं प्रेम व आनन्द के रूप में करती हूँ और मुझे पता होता है कि सब कुछ ठीक होगा।

***

श्रीगुरुमाई के साथ प्रसंग : ३

लीलावती स्टुअर्ट

वर्ष १९८३ की गर्मियों में, मैं सेवा अर्पित करने के लिए श्री मुक्तानन्द आश्रम गई; उस समय मैं इक्कीस वर्ष की थी। मैंने हाई-स्कूल की पढ़ाई पूरी कर ली थी, पर मैं विश्वविद्यालय नहीं जाना चाहती थी। मैं चाहती थी कि मेरा जीवन ही मेरा विश्वविद्यालय हो! लेकिन मैं यह नहीं जानती थी कि पैसा कमाने के लिए मैं क्या काम करना चाहती हूँ। मुझे लग रहा था जैसे मेरा मन कभी इस तरफ़ तो कभी उस तरफ़ भटक रहा है; वह मेरे लिए बड़ा ही बैचेनी का समय था।

एक शाम, सत्संग से ठीक पहले, गुरुमाई जी अनुग्रह भवन में भगवान नित्यानन्द मन्दिर के पास कुछ लोगों से मिल रही थीं। मैं पास ही खड़ी थी। जहाँ मैं खड़ी थी वह स्थान मुझे इतनी अच्छी तरह से याद है, जैसे बस कल की ही बात हो।

वहाँ खड़े हुए मैं गुरुमाई जी की ओर देख रही थी, तब मेरे मन में यह इच्छा हुई कि काश, मैं अपने भविष्य के प्रति स्पष्ट हो पाती। उसी समय गुरुमाई जी ने मुड़कर मेरी ओर देखा और मुझे आगे आने के लिए कहा।

गुरुमाई जी ने मुझसे कहा कि वे जानती हैं कि मैं कुछ योगदान करना चाहती हूँ और अपने जीवन के माध्यम से कुछ बदलाव लाना चाहती हूँ। श्रीगुरुमाई ने कहा कि सफल होने के लिए, मैं जो भी कर रही हूँ, उसमें मुझे १०० प्रतिशत देना होगा। और १०० प्रतिशत देना, मेरे जीवन के हर क्षेत्र में लागू होना चाहिए : मेरे परिवार में, सम्बन्धों में, पढ़ाई में, मेरे कार्य में और मेरी सेवा में। यदि मैं एक प्रतिशत दूँगी तो बदले में मुझे एक प्रतिशत ही मिलेगा। गुरुमाई जी ने कहा कि मैं इस बात पर विचार करूँ!

गुरुमाई जी के इन शब्दों को सुनते समय मैं अपनी पूरी सत्ता के साथ जानती थी कि यह मार्गदर्शन मेरे लिए महत्त्वपूर्ण है। मैंने महसूस किया कि मेरे पैर ज़मीन पर मज़बूती से जम रहे हैं, मानो वे मुझे वहीं स्थिर कर रहे हों। अब मुझमें भटकने का कोई एहसास नहीं था। मुझे याद है, बाद में मैं यह

सोच रही थी कि मेरे शरीर ने तब कितनी बुद्धिमानी से काम लिया था कि वह गुरुमाई के शब्दों को सुनकर वहीं स्थिर हो गया था।

गुरुमाई जी के मार्गदर्शन पर मनन करने के लिए, शाम को मैं अपने कमरे में गई। मैंने सोचा, *'किसी कार्य को १०० प्रतिशत देना तो सरल होना चाहिए!'* परन्तु फिर मेरे मन में विचार आया, *'१०० प्रतिशत देने का सच में क्या अर्थ होता है? मुझे कहाँ से और कैसे शुरू करना चाहिए?'* १०० प्रतिशत देना सरल होना चाहिए यह कहते-कहते थोड़ी ही देर में मैं अपने आप से कहने लगी थी कि यह कार्य तो बहुत बड़ा है! पर, अपने और अन्य लोगों के अनुभवों को सुनकर मैं जो जानती थी वह यह था कि गुरुमाई जी मुझे ऐसा कुछ भी करने के लिए नहीं कहेंगी जो मैं नहीं कर सकती हूँ। मैं जानती थी कि गुरुमाई जी के मार्गदर्शन का पालन करने के लिए, उनकी कृपा हमेशा मेरे साथ होगी और मुझे सम्बल प्रदान करेगी।

अपनी चिन्ताओं पर विचार करते रहने के बजाय, मैंने तय किया कि मैं गुरुमाई जी के शब्दों पर ध्यान करूँगी और उनके मार्गदर्शन को अपने हृदय में कोमलता से धारण करूँगी : मैं बस उनके शब्दों के साथ बनी रहूँगी। और फिर मेरे मन में यह विचार आया : मुझे अगला जो भी कार्य करना है, उसी पर मैं अपना १०० प्रतिशत केन्द्रण देना शुरू करूँगी। मेरा अगला कार्य था, दाँत साफ़ करना। इसलिए रोज़ की तरह ब्रश करने के बजाय—यानी बस अपने कामों में से एक काम ख़त्म करना है, इसलिए ब्रश करने के बजाय मैंने ध्यान-से और ठीक-से दाँत साफ़ किए। फिर अगला काम था कपड़ों को तह करना और उन्हें व्यवस्थित कर रखना, न कि बस कुर्सी पर ढेर लगा देना। फिर जब मैं सुबह उठी तो मैंने कम्बल को गद्दे पर ही डाल देने के बजाय बिस्तर को अच्छी तरह सजाया। और इस तरह मैंने हर कार्य के प्रति १०० प्रतिशत देना आरम्भ कर दिया।

जब मैं अपने घर मेलबोर्न, ऑस्ट्रेलिया वापस आई तो मैंने अपने जीवन के हर क्षेत्र में गुरुमाई जी के मार्गदर्शन का पालन करना जारी रखा। उदाहरण के लिए, मैं एक बहुत ही अच्छे रेस्तराँ में बैरे की नौकरी करती थी, तो मैं उसी नौकरी में वापस आ गई। पहले मैं शक्कर की किसी ख़ाली कटोरी के पास से, मन ही मन यह कहते हुए निकल जाती, *'कोई और इसे भर देगा।'* या नमकदान और काली मिर्च की डिब्बी पर किसी की उँगलियों के दाग़ देखती और सोचती, *'जाने दो; इसे कोई नहीं देखेगा!'*

लेकिन अब, जब मेरा ध्यान इन चीज़ों की ओर जाता था तो मैं उन्हें अपना १०० प्रतिशत देती। शक्कर की ख़ाली कटोरियों को भर देती और नमकदान और काली मिर्च की डिब्बी पर लगे दाग़ों को पोंछ देती; बाथरूम में पेपर टॉवेल बदल देती। और यह इसी प्रकार चलता रहा।

लगभग छः महीने तक इस नौकरी को करते-करते, एक दिन रेस्तराँ के मालिक मेरे पास आए और उन्होंने कहा कि वे कई दिनों से मेरा काम देख रहे हैं। ऐसा निष्ठावान कर्मचारी उन्होंने कभी नहीं देखा; उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था कि मैं वेटर के इन नीरस कार्यों को बिना कहे ही कर रही थी! लेकिन मैं जानती थी कि जो वे देख रहे थे, वह था मेरे कृत्य में गुरुमाई जी का मार्गदर्शन!

फिर उन्होंने मुझे मैनेजर बनने का प्रस्ताव दिया, जिसे मैंने ख़ुशी-ख़ुशी स्वीकार कर लिया। चार या पाँच महीनों बाद, उन्होंने मुझे कार्यक्रम प्रबन्धक के पद का प्रस्ताव दिया जिसे मैंने स्वीकार कर लिया और अगले कुछ पाँच महीनों के बाद उन्होंने मुझे अपने नए होटल में साझेदारी का प्रस्ताव दिया।

यद्यपि उस समय मैंने व्यापार के इस अवसर को स्वीकार नहीं किया, आगे जाकर मैंने अपना ख़ुद का ही एक अत्यन्त सफल व्यापार आरम्भ किया। समय के साथ मैंने अपने जीवन के अन्य कितने ही क्षेत्रों को भी फलता-फूलता देखा है। मैं जानती हूँ कि वह सफलता जिसका मैंने अनुभव किया, वह गुरुमाई जी के मार्गदर्शन—कि मैं अपना १०० प्रतिशत दूँ—को लागू करने का ही फल है।

धन्यवाद, गुरुमाई जी।

***

श्रीगुरुमाई के साथ प्रसंग : ४

वाणी अग्रवाल

१९८० के वर्षों में, मैं गुरुदेव सिद्धपीठ में एक गुरुकुल विद्यार्थी थी। मैं गुरुकुल जीवन के हर एक पल का पूरा आनन्द लेती थी। मुझे सिद्धयोग अभ्यासों—श्रीगुरुगीता का पाठ, ध्यान, सेवा आदि को नियमित रूप से करना बहुत अच्छा लगता था और मैं हर सुबह अपने दिन की शुरुआत करने के लिए बेसब्री से इन्तज़ार किया करती थी।

और फिर एक दिन, अचानक ही मेरे मन ने तर्क-कुतर्क करना शुरू कर दिया। कई सन्देह, कई सारे प्रश्न मेरे मन में उठने लगे : *'मैं आश्रम में क्यों हूँ? गुरु-तत्त्व क्या है? मैं क्या कर रही हूँ? गुरु कौन हैं?'* कुछ भी सत्य नहीं लग रहा था—कुछ भी नहीं।

यह मेरे लिए अत्यन्त कष्टकारी था। अपने हृदय में मैं यह जानती थी कि गुरुमाई जी मेरी गुरु हैं और यह कि यह मेरा पथ है। मुझे अनेक रूपान्तरणकारी अनुभव हुए थे। मैं जानती थी कि यह केवल मेरे

मन का खेल है—अहंकार अपनी शक्ति का एहसास करा रहा है। फिर भी मैंने अपने मन की बात सुनना शुरू कर दिया; मैं इन सभी प्रश्नों से प्रभावित होने लगी।

तीन महीने बीत गए, अब बस, मुझसे और सहन नहीं हो रहा था। मैंने मन ही मन गुरुमाई जी से प्रार्थना की कि वे कृपा कर मेरे मन को शान्त करें। मैंने उनसे सहायता माँगी जिससे मैं अपने मन की बकबक से छुटकारा पा सकूँ।

दो दिन बाद, जब मैं अन्नपूर्णा भोजन-हॉल में प्रवेश कर रही थी तब मैंने गुरुमाई जी को हॉल के पीछे की सीढ़ियों पर बैठे हुए देखा। वे अकेली ही बैठी थीं। मैं पास जाकर खड़ी हो गई। गुरुमाई जी ने मेरी ओर देखा और पूछा, "कुछ कहना है?" मैंने सिर हिलाया। फिर मैं उनके पास गई, उन्हें प्रणाम किया और उनके चरणों के पास बैठ गई। पिछले तीन महीनों में मेरे मन में जो कुछ भी चल रहा था, मेरे सारे सन्देह, मेरे सभी प्रश्न, वे सब मैंने गुरुमाई जी को बता दिए। मैंने उनसे कुछ भी नहीं छिपाया।

मैंने जो कुछ भी कहा, गुरुमाई जी ने वह सब ध्यान से सुना. . . और फिर वे खिलखिलाकर हँसने लगीं। वे बहुत हँसी और हँसती रहीं, हँसती रहीं। अचानक उनकी आनन्दमय हँसी के साथ मैं भी हँसने लगी। गुरुमाई जी ने कहा, "तुम्हें 'नेति-नेति' की एक महान अनुभूति हो रही है। वेदान्त कहता है, 'यह सत्य नहीं है, वह सत्य नहीं है।' कुछ भी सत्य नहीं है।"

गुरुमाई जी ने मेरी ओर बड़ी करुणा और दयालुता के साथ देखा और कहा, "सब कुछ ठीक है। जाओ और आराम करो। तुम्हें आराम की आवश्यकता है।" और वे चली गईं।

मुझे अपने ऑफ़िस में कुछ काम पूरा करना था, इसलिए मैंने सोचा, *'मैं ऑफ़िस जाकर अपना काम पूरा कर लेती हूँ और फिर अपने कमरे में चली जाऊँगी।'*

कुछ घण्टों बाद जब मैं अपने ऑफ़िस से बाहर निकल रही थी, तब गुरुमाई जी वहीं खड़ी थीं और किसी से बात कर रहीं थीं। मुझे देखकर उन्होंने पूछा, "तुम आराम करने नहीं गई?" उन्होंने मेरी ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखा और कहा, "जब गुरु आदेश देते हैं तो उसी समय उसका पालन करो।"

मैं अपने कमरे में गई। उस समय दोपहर के चार बज रहे थे। मैंने अपने कमरे के सारे पर्दे बन्द किए और बिस्तर पर लेट गई। तुरन्त ही मुझे नींद आ गई और दूसरे दिन सुबह जब आँख खुली तो मुझमें नई स्फूर्ति और ऊर्जा भरी हुई थी। मुझे लगा जैसे मैं एक अलग ही व्यक्ति हूँ। मेरे सारे सन्देह ख़त्म हो चुके थे। ऐसा लग रहा था जैसे वे तीन महीने कभी थे ही नहीं।

मैंने पूजा में गुरुमाई जी की फ़ोटो की ओर देखा और मेरा हृदय कृतज्ञता से भर गया। मैंने गुरुमाई जी के प्रेम व उनकी करुणा का अत्यधिक ठोस रूप में अनुभव किया था।

धन्यवाद, गुरुमाई जी।

© २०१७ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।